है—श्रीकृष्ण से सम्बन्धरहित कुछ भी सत्ता नहीं है, इस अनुभूति से परम शान्ति और अभय पद की प्राप्ति होती है।

17/4

सर्वकर्माणि मनसा संन्यस्यास्ते सुखं वशी।
नवद्वारे पुरे देही नैव कुर्वन्न कारयन्।।१३।।

सर्व=सम्पूर्ण; **कर्माणि**=कर्म; **मनसा**=मन से; **संन्यस्य**=त्याग कर; **आस्ते**=रहता है; **सुखम्**=सुखपूर्वक; **वशी**=आत्मसंयमी; **नवद्वारे**=नौ द्वार वाले; **पुरे**=नगर में; **देही**=देहबद्ध जीवात्मा; **न**=नहीं; **एव**=निस्सन्देह; **कुर्वन्**=करता हुआ; **न**=नहीं; **कारयन्**=कराता हुआ।

अनुवाद

जब शरीरबद्ध जीवात्मा अपनी प्रकृति का संयम करके मन से सब कर्मों का त्याग कर देता है, तब वह नौ द्वार वाले नगर (प्राकृत देह) में कुछ भी करते अथवा करवाते बिना सुख से रहता है।।१३।।

तात्पर्य

देहबद्ध जीवात्मा नौ द्वार वाली पुरी का निवासी है। देहरूपी नगरी के कार्य प्राकृतिक गुणों द्वारा स्वयमेव होते रहते हैं। अपने आप देह की परिस्थितियों के आधीन हुआ जीव इच्छा होने पर इनसे मुक्त भी हो सकता है। अपने दिव्य स्वरूप की विस्मृतिवश ही वह अपने को प्राकृत देह मान बैठता है और परिणाम में दुःख भोगता है। कृष्णभावनामृत से यथार्थ स्वरूप को फिर प्राप्त करके वह देह के बन्धन से मुक्त हो सकता है। वास्तव में कृष्णभावना धारण करते ही जीव तत्क्षण सब शारीरिक क्रियाओं से सर्वथा असंग हो जाता है। इस प्रकार के मर्यादित जीवन के प्रभाव से उसके चिन्तन में भी परिवर्तन आ जाता है जिससे वह नौ द्वार वाली पुरी में सुखपूर्वक निवास करता है। नौ द्वार ये हैं—

नवद्वारे पुरे देही हंसो लेलायते बहिः।
वशी सर्वस्य लोकस्य स्थावरस्य चरस्य च।।

'जीवात्मा की देह में निवास करने वाले श्रीभगवान् ब्रह्माण्ड के सम्पूर्ण जीवों के स्वामी हैं। देह के नौ द्वार हैं—दो नेत्र, दो नासाछिद्र, दो कर्ण, मुख, गुदा तथा उपस्थ। बद्धावस्था में जीव अपने को देह समझता है; किन्तु जब उसे अन्तर्यामी भगवान् और अपने में सादृश्य का बोध होता है, तो देहस्थ होने पर भी वह श्रीभगवान् के समान ही मुक्त हो जाता है।' (श्वेत ३।१८)

अतएव कृष्णभावनाभावित पुरुष प्राकृत देह की बाह्य-आंतरिक, दोनों ही प्रकार की क्रियाओं से मुक्त है।

18/4

न कर्तृत्वं न कर्माणि लोकस्य सृजति प्रभुः।
न कर्मफलसंयोगं स्वभावस्तु प्रवर्तते।।१४।